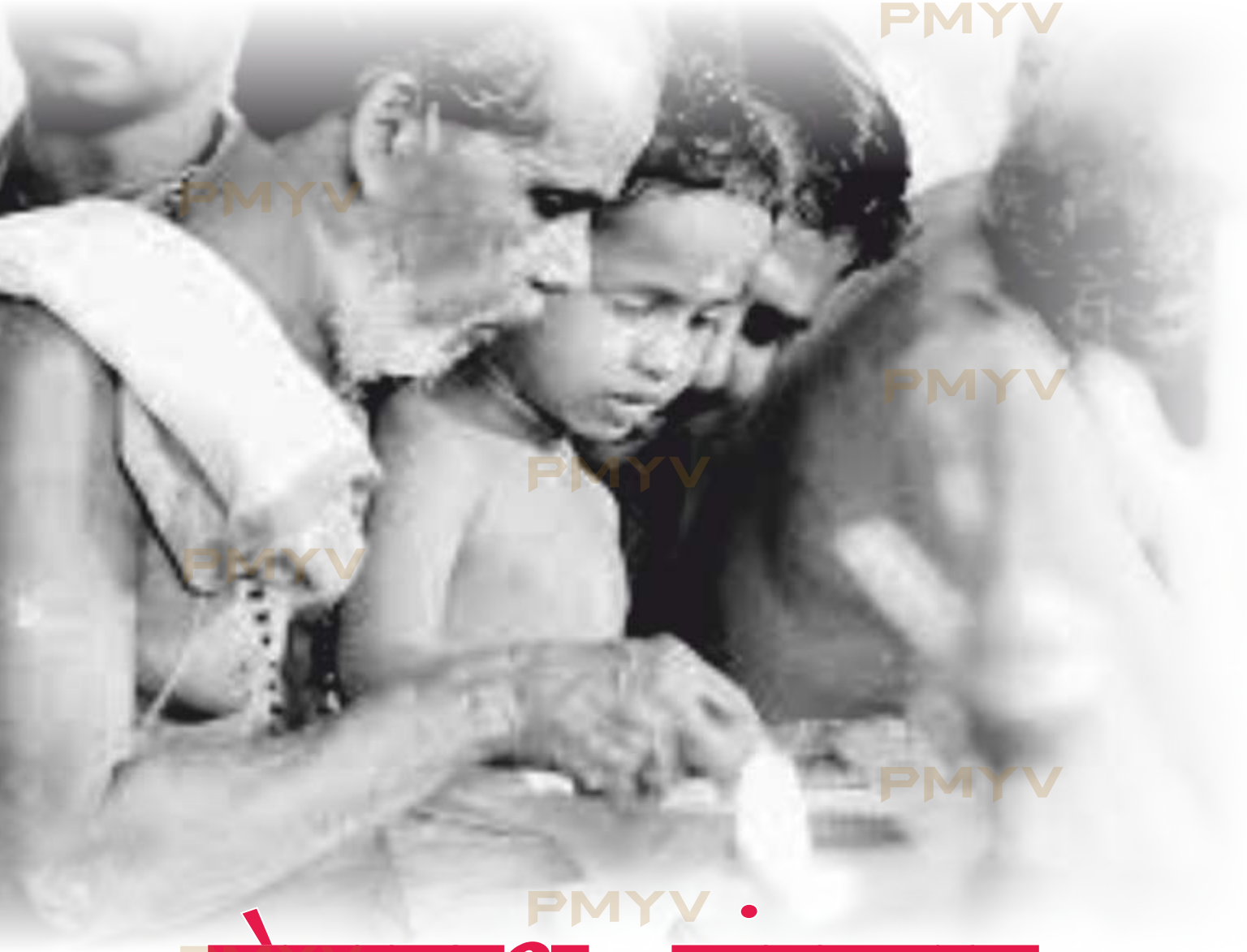

वेदारम्भ संस्कार

प्राचीन समय में **उपनयन संस्कार** के पश्चात् **ब्रह्मचारी गुरूकुल में रहकर, नीति, दर्शन, व्याकरण, इतिहास** आदि का अध्ययन करना प्रारम्भ कर देता था। इन विभिन्न विषयों के पढ़ने से जब धीरे-धीरे बुद्धि विकसित हो जाती थी, तब गुरू **उत्तम तिथि** शोधकर, विभिन्न मंगल कृत्य करके शिष्य को अग्नि के **सम्मुख** बैठाते थे। **ब्राह्मण** तथा प्रजापति को सभी **सामग्री** अर्पित करके, पढाये जाने वाले वेद के लिए नित्य घी की आहुतियाँ **देवताओं** को समर्पित की जाती थी। इसके बाद वेद का अध्यापन प्रारम्भ किया जाता था। **वेद ज्ञान** को **ईश्वरीय ज्ञान** कहा गया है। अत: वेद पढ़ने का प्रारम्भ निश्चय ही **संस्कार** माना जाना चाहिये।

वर्तमान युग में विज्ञान की अत्यधिक प्रगति हो जाने तथा विषयों की संख्या बढ़ जाने के कारण वेद के पठन पाठन की ओर आग्रह नगण्य रह गया है। विद्यालयों की कक्षा में **संस्कृत** विषय में एकाध **वेद ऋचा** मात्र पढ़ाई जाती है। अत: यह संस्कार तो पूर्णतया लुप्त हो चुका है।

शिक्षा के महत्व को प्रारम्भ से ही स्वीकार किया गया है। **शिक्षित व्यक्ति ही स्वयं का विकास करने के साथ-साथ समाज और देश के विकास में भी सहयोग कर सकता है।** वर्तमान में शिक्षा के महत्व को भली प्रकार से समझा जा सकता है परन्तु प्राचीनकाल में भी शिक्षा के महत्व को भली प्रकार से स्वीकार किया गया था। तब शिक्षा का स्वरूप भिन्न था। उस समय **व्यावसायिक क्षेत्र** में आगे बढ़ने के लिए नहीं अपितु वेदों तथा धर्मग्रंथो के अध्ययन के लिए शिक्षा को आवश्यक माना गया था। **तब शिक्षा का महत्व वेदाध्ययन की दृष्टि से अधिक था।** इस कारण इस संस्कार को विद्यारम्भ संस्कार अथवा वेदारम्भ संस्कार के रूप में माना जाता है। इस संस्कार को उपनयन या यज्ञोपवित संस्कार के तुरन्त बाद आरम्भ

कर दिया जाता था जो 25 वर्ष (ब्रह्मचर्य की सीमा) की आयु तक चलता था।

प्राचीन समय में यह संस्कार हर किसी को नहीं मिलता था। क्योंकि इसके लिये विशेष **योग्यता** तथा **गुणों** का होना आवश्यक था। साथ ही इस **संस्कार** को करने के लिए कठिन प्रण लेने होते थे। इसमें एक प्रण यह रहता था कि वेदारम्भ करने वाले बालक पर उसके माता-पिता तथा रिश्तेदारों का ब्रह्मचर्य की सीमा तक कोई अधिकार नहीं रह पाता तथा पच्चीस वर्ष की आयु तक वह गुरू के संरक्षण में ही रहता था। इसके लिए **उसे पच्चीस वर्ष की आयु तक भूमि पर सोना होता था, भिक्षा मांगनी होती थी, आश्रम को स्वच्छ रखना, वन से सूखी लकड़ियाँ और पुष्प तोड़कर लाना, गुरू की आज्ञा का पालन करना व वेदों का अध्ययन करना सम्मिलित था।** गुरू बालक की जांच-परख करके ही उसे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार करते थे। इस संस्कार में एक मनुष्य के अन्दर ज्ञान का असीमित भंडार भरा जाता था। उसे चारों वेदों का अध्ययन करवाया जाता था। जिससे **उसे ब्रह्मांड के गुण, रहस्य, विज्ञान, अध्यात्म, संस्कृति का महत्व, चिकित्सा के उपाय, विभिन्न जड़ी-बुटियों तथा औषधियों के बारे में जानकारी और उसका प्रभाव, भुगोल, ज्योतिष शास्त्र, इतिहास, रसायन, गणित के सूत्र इत्यादि की शिक्षा दी जाती थी।** ब्रह्मणों को सम्पूर्ण शिक्षा दी जाती थी क्योंकि उन्हें पवित्र कार्य, धार्मिक अनुष्ठान, शोध इत्यादि करने होते थे तथा साथ ही आगे चलकर उन्हें अगली पीढ़ी को भी शिक्षा देनी होती थी। अन्य को उनके क्षेत्र के अनुसार शिक्षा देने का प्रावधान था ताकि हर कोई अपने क्षेत्र के अनुसार उचित कार्य कर सके।

गुरूजन द्वारा सिखायें समस्त **वेद शिक्षा** व **ज्ञान** के अक्षुण्ण भंडार थे जिनका अध्ययन करके एक प्रकार से मनुष्य को दूसरा जीवन मिलता था। इसलिये उन्हें शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् **द्विज** भी कहा जाता था अर्थात् द्वितीय जन्म। ऐसा माना जाता है कि वेदों का सारभूत एकाक्षर **'ॐ'** प्रथम अक्षर था जिससे सबसे पहले मनुष्य का परिचय हुआ। वेदारम्भ संस्कार में भी शिष्य को ज्ञान देने की शुरआत **'ॐ'** मंत्र के माध्यम से की जाती थी तथा फिर सभी प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। एक शिक्षित समाज के द्वारा ही निरन्तर गति रहती थी तथा धर्म रूपी कार्य किये जाते थे। इसलिये वेदारम्भ संस्कार का होना अति आवश्यक था। स्वयं **भगवान श्री राम** तथा **श्री कृष्ण** का भी **वेदारम्भ संस्कार** हुआ था तथा पच्चीस वर्ष की आयु तक उन्होंने भी गुरूकुल में रहकर **शिक्षा** प्राप्त की थी। वेद अध्ययन के महत्व के बारे में लिखा गया है कि

विद्यया लुप्यते पापं विद्यायाडयुः प्रवर्धते ।
विद्याया सर्वसिद्धिः स्याद्विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥

अर्थात् वेद विद्या के अध्ययन से सारे पापों का लोप होता है अर्थात् पाप समाप्त हो जाते हैं, आयु की वृद्धि होती है, समस्त सिद्धियां प्राप्त होती हैं, यहां तक कि समस्त **अमृत-रस अक्षनपान** के रूप में उपलब्ध हो जाता है।